# कोसी नदी की कहानी

दुइ पाटन के बीच में ...

दिनेश कुमार मिश्र

लोक विज्ञान संस्थान, देहरादून

© दिनेश कुमार मिश्र

प्रथम आवृत्ति : नवम्बर, 2006

मुद्रक :
इम्प्रिमियरी
111-डी, लक्ष्मी मार्केट, मुनीरका
नई दिल्ली - 110067

टाइप सेटिंग :
ऐपल सॉफ्ट
सुभाष मार्केट, लंगरटोली
पटना-800004

प्रकाशक :
लोक विज्ञान संस्थान (People's Science Institute)
252, फ़ेज़-I, वसंत विहार
देहरादून-248006
उत्तरांचल

अपेक्षित सहयोग - 200/-

# प्रकाशकीय

लोक विज्ञान संस्थान( People's Science Institute) के फ़ेलो दिनेश मिश्र की नई पुस्तक 'दुइ पाटन के बीच में' आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुए हमें हर्ष हो रहा है। बिहार की कोसी नदी किसी भी बाढ़ की चर्चा के केन्द्र में रहती है। इसी नदी पर उपलब्ध सभी जानकारी को दिनेश जी ने बड़े सलीके से एक जगह रखा है।

पुस्तक का लेखन-कार्य दिनेश जी ने अधिकांशत: कोसी क्षेत्र में ही रहते हुए संपन्न किया। आइ.आइ.टी., खड़गपुर के सिविल इंजीनियरिंग के विद्यार्थी के रूप में आपकी तटबंध एवं नहरों के बारे में दक्षता तो है ही, प्रभावित कोसी क्षेत्र में लगातार रहते हुये आपने धरातलीय वास्तविकताओं एवं समाजशास्त्रीय अनुभवों को भी भली भांति परखा है। प्रस्तुत रचना इस प्रकार तकनीकी दक्षता एवं लोकप्रिय आंकाक्षाओं के प्रति संवेदना का एक ऐसा संगम है जिसे वर्तमान एवं भविष्य दोनों याद रखेगें। मिश्र जी की भाषा व शैली बिल्कुल सहज एवं लोकपरक है। वैज्ञानिक और तकनीकी विषयों को सरल भाषा में पाठकों के सामने रखना उनका उद्देश्य भी रहा है। बाढ़ के विषय में रुचि रखने वाले या भविष्य में नदियों पर काम करने वाले किसी भी व्यक्ति को कोसी नदी संबधी अब तक की घटनाओं, समस्याओं और बहस की जानकारी के लिए शायद किसी दूसरी जगह नहीं भटकना पड़ेगा। इस पुस्तक में जहां तकनीक की सीमाओं, समाज की अपेक्षाओं, तकनीकी हस्तक्षेप, नदियों के साथ होने वाली राजनीति तथा परियोजना के भुक्त-भोगियों के मोह-भंग के बारे में चर्चा है, वहीं विकल्पों की ओर इशारे भी हैं।

लोक विज्ञान संस्थान का विकल्पों के प्रति विशेष आग्रह है। वर्ष 1992 में हमने कोसी क्षेत्र की जल-निकासी का अध्ययन भी किया था और इसी कड़ी में आगे बढ़ते हुये अब संस्थान इस दस्तावेज़ को आपके सामने पेश करता है।

**रवि चोपड़ा**
लोक विज्ञान संस्थान, देहरादून
People's Science Institute, Dehradun

# दो शब्द

बहुत कम लोग हैं जो तह में जाकर समस्याओं का अध्ययन करते हैं। बाढ़ जैसा प्रश्न अत्यन्त दुरूह है। लेकिन दिनेश कुमार मिश्र जी ने उत्तर बिहार की बाढ़ को वर्षों से अपने गहन अध्ययन का विषय बना रखा है।

प्रस्तुत पुस्तक उनकी पहली नहीं है। इसके पहले भी उनकी पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। मिश्र जी अपनी धुन के धुनी व्यक्ति हैं, इसलिए यह मानने का कारण नहीं है कि यह पुस्तक अन्तिम होगी। जहां तक खेती का प्रश्न है उत्तर बिहार का बहुत बड़ा भाग बाढ़ से ग्रस्त है। हजारों लोग बरसात के महीनों में कमाई के लिए बाहर चले जाते हैं। विचित्र बात यह है कि कोसी क्षेत्र के अधिकांश भाग के लोग बरसात में धान नहीं पैदा कर पाते हैं। इसलिए बाहर कमाई के लिए चले जाते हैं। लौटते हैं तो जाड़े में गेहूं की खेती करते हैं, लेकिन खाते भात हैं। उन्हें चावल चाहिये- गेहूं बेच-कर चावल खरीदें या बाहर की कमाई से चावल खरीदें। मनुष्य बड़ी मुश्किल से खाने की आदतें बदल पाता है। कोसी क्षेत्र की खेती तब तक सुधरती दिखाई नहीं देती जब तक बाढ़ की समस्या का कोई हल नहीं निकल आये।

नेपाल, पूर्वी उत्तर प्रदेश और उत्तरी बिहार को मिला-कर ही इस समस्या को हल करना पड़ेगा।

बहुत ज़माना हुआ कुमारप्पाजी (जे.सी. कुमारप्पा, जो ग्रामीण अर्थशास्त्र के विशेषज्ञ थे और गांधी जी के शिष्य थे) ने यह सुझाव दिया था कि प्रांतों या राज्यों के निर्माण के पहले नदियों और उनके बहाव को समझ लेना चाहिये। लेकिन दूर कार्यालयों में बैठे अधिकारियों को फुर्सत कहां है कि वे इतनी गहराई से किसी समस्या को समझें। अब पंचायतीराज आया है तो स्वयं जनता से यह अपेक्षा की जा सकती है कि वह अपनी समस्याओं को खुद समझे और उनके समाधान के रास्ते ढूंढ़ने का काम केवल अधिकारियों पर न छोड़े। मिश्र जी जैसे जानकार लोग अपने बीच मौजूद हैं तो जानकारी का न होना आसानी से दूर किया जा सकता है। भारत नदियों का देश है। बिहार को लीजिये। उत्तर बिहार में बाढ़, दक्षिण बिहार में सूखा। क्यों विज्ञान के ज़माने में यह स्थिति बनी रहे? अगर विकास की योजनाओं में सबसे पहले पेट भरने और तन ढकने के उपाय सोचे गये होते तो आज विकास की कुछ दूसरी ही शक्ल होती। यह सब चेतावनी कुमारप्पाजी ने दी थी, लेकिन कौन सुनता है उनकी? दक्षिण बिहार में भी बरसाती नदियों की कमी नहीं है लेकिन हम साल भर पानी के लिए तरसते हैं? सोचिये, सरकार ने कितनी बड़ी ग़लती की। ज़मींदारी ख़त्म होने पर ज़मींदारों के बनवाये हुए सब आहर बन्दोबस्त कर दिये। कल जो आहर थे वे आज खेत बन गये। इसी तरह अनेक प्रश्न हैं जिनका गहराई के साथ अध्ययन करना पड़ेगा।

कोसी पर लिखी हुई उनकी पुस्तक बड़े महत्त्व की है। नदियों का प्रश्न भारत के लिए जीवन-मरण का प्रश्न है। हम जमीन पर सड़कें बनायें, उन पर बसें चलायें, और प्रकृति के बनाये इन रास्तों के द्वारा नदियों के पानी का समुचित उपयोग न करें यह भी कोई बुद्धिमानी की बात है! मिश्र जी हमारी आंखें खोल रहे हैं। आंखों को हम खुलने ही न दें और सही काम न करें तो इसमें मिश्र जी का क्या दोष है। उन्होंने समस्या को पहचाना। उसके बारे में सोचा-समझा, और यह पुस्तक तैयार की। मिश्र जी ने बहुत बड़ा काम किया। उस काम को दुनियां के सामने लाने का काम लोक विज्ञान संस्थान, देहरादून ने किया है जिसने यह किताब छपवायी है। दोनों के प्रति हम लोग कृतज्ञ हैं, हमेशा कृतज्ञ बने रहेंगे। मिश्र जी अपना अध्ययन जारी रखें, बहुत वर्षों तक जारी रखें, प्रभु से यह प्रार्थना है।

आचार्य राममूर्ति

पटना

1 अक्टूबर 2006

# अपनी बात

यह 1993 के नवम्बर महीने की घटना है। इंगलैण्ड के ऑक्सफोर्ड पॉलिटेकनिक के आपदा प्रबन्धन विभाग के अध्यक्ष भारत आये थे। आपदा प्रबन्धन के क्षेत्र में वह एक विश्व स्तर की हस्ती माने जाते हैं। कोलकाता की एक संस्था ने उन्हें एक सप्ताह के लिए आपदा प्रबन्धन का ट्रेनिंग शिविर चलाने के लिए राज़ी कर लिया और कोलकाता के इस शिविर में भाग लेने का निमंत्रण मुझे भी मिला। मैंने आयोजकों से अनुरोध किया कि अगर प्रोफ़ेसर साहब शिविर के पहले एक दिन मेरे साथ उत्तर बिहार में बिता सकें तो ट्रेनिंग शिविर में हमें उनके ज्ञान और अनुभव का कहीं ज़्यादा फ़ायदा मिल सकेगा। संयोग अच्छा था और प्रोफ़ेसर इस बात के लिए राज़ी हो गये और एक रात वह झंझारपुर (मधुबनी) के इन्सपेक्शन बैंग्लो में रहे। दूसरे दिन हम लोग जीप से घोंघेपुर गये जहां कोसी का पश्चिमी तटबन्ध समाप्त हो जाता है। पूरे रास्ते प्रोफ़ेसर साहब मुझसे कोसी और कमला परियोजना के बारे में सवाल पूछते रहे और मैं अपनी सामर्थ्य भर उनका उत्तर देता रहा।

गाँव भेजा में हम कोसी के पश्चिमी तटबन्ध पर चढ़े। उसके नीचे बाईं तरफ़ कोसी बह रही थी और दाहिने तरफ कमला-बलान थी। भेजा से कोसी तटबन्ध का आख़िरी किनारा 31 किलोमीटर दूर है। नीमा पहुंचते-पहुंचते बाढ़ से होने वाली तबाही साफ़ दिखाई पड़ने लगी। कुछ देर में धूल-धक्कड़ के बीच हम कोसी के पश्चिमी तटबन्ध के 54 वें किलोमीटर पर खड़े थे। यह तटबन्ध यहाँ समाप्त हो जाता है। नवम्बर का महीना होने के बावजूद यहां चारों ओर पानी था। पूरब में कोसी तटबन्धों के बीच नावें चल रही थीं और वही हालत पश्चिम में तटबन्धों द्वारा बाढ़ से तथाकथित सुरक्षित क्षेत्र में भी थी। केवल तटबन्ध और उस पर बसे हुये लोगों के घर ही पानी से बचे दिखाई पड़ते थे।

पश्चिमी तटबन्ध एकाएक समाप्त हो जाने के कारण कोसी नदी का पानी पीछे मुड़ कर घोंघेपुर समेत बहुत से गांवों को डुबाता था जिससे बचाव के लिए सरकार ने 1969 में एक बांध बनवा दिया था। इस बांध ने कोसी के पानी को तो रोका मगर उसके साथ-साथ बलान के पानी को भी रोक दिया जो कि नीचे जाकर कोसी से मिलती थी। अब यह गांव कोसी के बजाय कमला-बलान के पानी में डूबने लगे। धीरे-धीरे इस बांध में भी दरारें पड़ीं और कोसी तथा कमला-बलान ने करीब 52 गांवों को घेर लिया। इस जगह पर उस समय बारहों महीनें नाव चला करती थी।

मैंने प्रोफ़ेसर साहब से कहा कि आपने तो बहुत दुनियां देखी है और बड़ी-बड़ी विपदाओं से आपका सामना हुआ होगा, आप मेरे लिए बरसात के मौसम में एक गिलास पी सकने योग्य पानी की व्यवस्था यहां कैसे हो पायेगी, वह बता दें। प्रोफ़ेसर साहब आसमान की तरफ़ देखने लगे जैसे कि इस सवाल का जवाब तो ऊपर वाला ही दे सकता है। थोड़ी ही देर में उनका ध्यान टूटा और वह बोले कि यह मर्ज़ लाइलाज है (This is beyond redemption)। मैंने कहा कि चलिये! अब हम लोग कोलकाता चलें और वहां आपदा प्रबन्धन के ट्रेनिंग शिविर में आगे की बात करेंगे।

घोंघेपुर से लौटते समय प्रोफ़ेसर साहब ने मुझसे नदी के तटबंधों और उसके पाट के बारे में बहुत से सवाल पूछे और इस बात पर आश्चर्य व्यक्त किया कि इतने लोग यहाँ दोनों तटबन्धों के बीच स्थाई रूप से रहते हैं। तभी यह विचार किया गया कि कोसी तटबन्धों के बीच फंसे लोगों की त्रासदी पर एक पुस्तक लिखी जाय और उसी दिन बहुत से मित्रों की उपस्थिति में इस पुस्तक का नाम भी तय हुआ था।

घोंघेपुर एक मिसाल है और उत्तर बिहार में ऐसी सैकड़ों दूसरी मिसालें मिल जायेंगी जहां से उठे सवालों का जवाब खोजने के लिए सीधे भगवान से ही लौ लगानी पड़ती है। उनका जवाब अब विशेषज्ञों को भी मुश्किल से सूझता है। ऐसी जगहें आपदा प्रबन्धन की हदों से बाहर चली गई हैं।

कोलकाता शिविर में प्रोफ़ेसर साहब ने विभिन्न परिस्थितियों में आपदा प्रबन्धन के बहुत गुर सिखाये। इस शिविर में भाग लेने वाले कई लोग ऐसे थे जिन्होंने घोंघेपुर देख रखा था और वह प्रोफ़ेसर साहब को बीच-बीच में टोकते थे कि वह घोंघेपुर के लिए क्या सलाह देते हैं? बाढ़ सम्बंधी आपदा प्रबंधन के सारे सवाल घोंघेपुर पर आकर अटक जाते थे।

मैंने पहली बार घोंघेपुर 1984 में देखा था जब मैं उसी वर्ष सहरसा जिले के नवहट्टा प्रखंड में टूटे कोसी के पूर्वी तटबंध के हादसे में राहत कार्यों के सिलसिले में सहरसा गया था। उसके बाद न जाने कितनी बार वहां आना-जाना हुआ। मुझे जब भी किसी ने कहा कि वह बाढ़ वाला इलाका देखना चाहता है, मैं उसे घोंघेपुर जाने की सलाह देता हूं जहां जाकर अच्छे-अच्छों की अक़्ल गुम हो जाती है। कई बार मैंने वहां जाने के लिए एक गाइड का फ़र्ज़ भी निभाया है। पिछले कई वर्षों से इस इलाके में कमला की गाद जमा होने के कारण नई मिट्टी भारी मात्रा में जमा हुई है जिससे अब रबी की कुछ-कुछ फ़सल होने लगी है वरना कोसी तटबंध बनने के 40 साल बाद तक तो यहां पानी ही पानी था। मुमकिन है कि राज्य का जल-संसाधन विभाग इस नई पड़ी मिट्टी को भी अपनी उपलब्धियों में गिनाता हो पर यह सब अनायास हुआ है, इसमें उसका कोई योगदान नहीं है। नई मिट्टी पड़ने से अब कमला और गेहुमां नदियों का पानी पीछे उत्तर की ओर ठेल कर नये इलाकों को डुबाता है और उसकी निकासी में पहले से कहीं ज्यादा देर होती है। इन इलाकों में बाढ़ मौसमी घटना है पर जल-जमाव अब स्थाई-भाव है।

इस पूरे इलाके में नदियों और धारों का जाल बिछा है। आज़ादी के बाद बाढ़ नियंत्रण के नाम पर सरकारों ने छूट कर तटबंध बनाये और जल-निकासी की पूरी व्यवस्था को चौपट कर दिया। अब जो स्थिति है उसमें नदियों की पेटी ऊपर उठ गई है और बाहर के तथाकथित सुरक्षित क्षेत्र की ज़मीन उसके नीचे है। जल-जमाव बेतरह बढ़ा है और तटबंध टूटने की घटनाएं आए दिन होने कारण गांव की जमीनों पर बालू पटा है। अनचाहे पानी से निज़ात पाने और उसकी सहज निकासी के लिए लोग खुद भी तटबंध काटने लगे हैं। खेती की ज़मीन घटने और उसके साथ-साथ आबादी बढ़ने से अर्थ-व्यवस्था चरमरा गई है जिसकी वज़ह से काम की तलाश में मजदूरों का सुदूर क्षेत्रों में पलायन बढ़ा है। इस तरह से एक बड़े क्षेत्र पर कृषि उत्पादन प्रक्रिया ठप पड़ जाने से इस कृषि और गो-वंश प्रधान क्षेत्र में जितनी भी सामाजिक विकृतियां सोची जा सकती हैं, वह सभी यहां मौजूद हैं।

इस अध्ययन में हम ने कोसी और उसके भारतीय भू-भाग पर कथित विकासमूलक चेष्टा और बाढ़ नियंत्रण प्रयासों के प्रभाव को शामिल किया है। कोसी अपनी धारा के परिवर्तन के लिए हमेशा से बदनाम रही है। रेवेन्यू

वसूली में आने वाली दिक्कतों के कारण अंग्रेज़ों ने उसे 'बिहार का शोक' तक कहा है। स्थानीय लोग जरूर अभी भी इस नदी को कोसी माई कह कर ही सम्बोधित करते हैं। हमने इस नदी के पौराणिक और लोक-कथात्मक रूप से लेकर भौगोलिक गुणों तक को समेटने की कोशिश की है। इस नदी के प्रवाह के 'परोपकार' से लेकर उस के द्वारा हुई तबाहियों की चर्चा की है और इस नदी को नियंत्रित करने की प्रक्रिया और उस को लेकर हुई बहस को उभारने का प्रयास किया है। इस नियंत्रण के जो भी परिणाम सामने आये हैं और समस्या से निबटने के अभी भी जो विकल्प हमारे सामने खुले हुये हैं, उन्हें हमने उजागर करने की कोशिश की है।

कोसी तटबंधों के बीच 380 गांव और उसमें बसने वाले लगभग दस लाख लोग फंसे हैं जिनके ऊपर से कोसी का पानी हर साल गुज़रता है। इन गांवों की सही सूची तक कहीं उपलब्ध नहीं थी और इस कमी को पूरा करने की कोशिश हमने की है। इन गांवों के विस्थापितों की अपनी जगह बने रह कर बाढ़ की त्रासदी भोगने की वर्तमान परिस्थिति और भविष्य की संभावनाओं पर भी एक नज़र डालने की कोशिश की गई है। यह लोग अब क्या-क्या कर सकते हैं, इस पर चर्चा की गई है।

बिहार की बाढ़ समस्या का जो सरकारी समाधान है वह तो नेपाल में बांधों के निर्माण पर ही आश्रित है। इन बांधों में सबसे पुराना प्रस्ताव 1937 का कोसी नदी पर बराहक्षेत्र बांध का है जिसकी संभाव्यता रिपोर्ट तैयार करने के लिए इस प्रस्ताव के 67 साल बाद 2004 में नेपाल में कुछ दफ़्तर खोले गये हैं, ऐसा बताते हैं। बांध निर्माण की दिशा में इतनी धीमी प्रगति से बाढ़ नियंत्रण का लाभ कब और कैसे मिलेगा, यह कह पाना मुश्किल है। बांध निर्माण के बाद भी यह लाभ मिलेगा या नहीं, इस पर हमेशा से संदेह व्यक्त किया जाता रहा है।

इन बांधों के बनने के बाद नेपाल द्वारा भारत को बेची जाने वाली बिजली की दर और वहां होने वाले विस्थापितों के पुनर्वास के मसले पर अभी तक दोनों देशों के बीच कोई सहमति नहीं बन पाई है। जब तक यह सहमति नहीं बनती है तब तक बांध के निर्माण की दिशा में अड़चनें आती रहेंगी।

नदियों के किनारे बने तटबंधों ने अपेक्षित परिणाम नहीं दिये और नेपाल में प्रस्तावित बांधों के निर्माण का फ़िलहाल कोई भरोसा नहीं है। ऐसी हालत में सरकार कभी अपने इंजीनियरों को बुला कर, जहां तक हमारी जानकारी है, यह नहीं कहती है कि तटबंधों से वांछित परिणाम नहीं मिल रहे हैं और नेपाल में प्रस्तावित बांध के निर्माण का कोई भरोसा नहीं है। आप लोग अपने स्तर से स्थानीय तौर पर बाढ़ से निपटने के लिए क्या किया जा सकता है--वह रास्ता बताइये।

प्रस्तावित बराहक्षेत्र बांध की 'भ्रम की टाटी' राजनीतिज्ञों और इंजीनियरों को विकल्प की दिशा में कुछ भी काम करने से रोकती है और उन्हें अकर्मण्य बना दिया है। पिछले करीब 70 वर्ष से यही स्थिति बनी हुई है। तब क्या समाज अपने दम पर कुछ कर सकता है? क्या इसमें हमारा परम्परागत ज्ञान और नदियों के साथ जीवन निर्वाह का हुनर कुछ मदद कर सकेगा, इस विषय पर चर्चा है। अगर बाढ़ का मुकाबला स्थानीय स्तर पर कर लिया जाय (यह काम अभी वैसे भी जैसे-तैसे हो ही रहा है) तब और कुछ नहीं तो इतना फ़ायदा जरूर होगा कि अगर कभी बराहक्षेत्र या वैसा कोई भी बांध बनता ही है तो उसी अनुपात में बांध की संचय क्षमता घटाने, बांध की ऊंचाई कम करने और उसके निर्माण की लागत को तो कम करने का लाभ जरूर मिलेगा। इससे बाढ़ के मसले पर हमारी आत्मनिर्भरता बढ़ेगी। और इस से नेपाल में प्रस्तावित बांधों के निर्माण के सालाना मंत्र-जाप और कर्मकाण्ड से भी मुक्ति मिलेगी।

तटबंधों की असफलता और नेपाल में बांधों के निर्माण की अनिश्चितता सरकार को बाध्य करती है कि वह बाढ़ के समय राहत कार्य चलाये। मगर समस्या इतनी विकराल है और संसाधन इतने क्षीण कि सरकार की खुद की स्वीकारोक्ति के अनुसार कोई 85-90 प्रतिशत बाढ़-पीड़ितों तक कोई राहत नहीं पहुंच पाती है। जब यह पहले से ही पता रहता है कि राहत महज औपचारिकता है तब उसकी भी छीना-झपटी होती है। इस चील-झपट्टे में वह हर शख़्स शामिल होता है जो किसी भी तरह पंजा मार सकता है।

आजकल इस राहत बंटवारे की प्रक्रिया में थोड़ा सुधार करने की बात चल रही है। इसलिए पहला काम हुआ कि राहत और पुनर्वास विभाग का नाम बदल कर आपदा प्रबंधन विभाग कर दिया गया। अब यह विभाग राहत के साथ-साथ बाढ़ पूर्व तैयारी, आपदा निवारण और दीर्घकालिक समाधान पर भी काम करेगा, ऐसी मंशा जाहिर की जाती है। सिंचाई विभाग का नाम बदल कर जल संसाधन विभाग कर दिये जाने के बावजूद इन विभागों की कार्य प्रणाली में न तो कोई परिवर्तन होना था और न हुआ। नाम बदलने मात्र से अगर समस्याओं का समाधान होने लगे तो देश में कहीं कोई समस्या ही नहीं रहेगी।

पिछली शताब्दी के 50 के दशक में निर्मित कोसी तटबन्ध अब तक छः बार टूटे हैं। यहाँ हमने इन सभी घटनाओं का विस्तार से अध्ययन करने की कोशिश की है जिसमें इनके टूटने से पहले की लापरवाही और उनके टूटने के बाद हुई थुक्का-फ़जीहत का जिक्र है। इन घटनाओं से न तो कोई सबक लिया जाता है और न ही उनके निराकरण का कोई प्रयास किया जाता है। इन्हें पढ़ने के बाद हम समझ पायेंगे कि बाढ़ को प्रलय में किस तरह बदला जाता है। यह बहस कि बाढ़ प्राकृतिक होती है या मानव निर्मित, कम से कम कोसी क्षेत्र में तो समाप्त है। यहाँ तो लोग उन चेहरों को भी पहचानते हैं जिनकी वज़ह से यहाँ बाढ़ आती है। बाढ़ किस तरह आपदा बनती है, यह समझना हो तो कोसी क्षेत्र से बेहतर शायद ही कोई जगह मिले।

बाढ़ जब आपदा बन गई तब आजकल आपदा प्रबंधन (डिज़ास्टर मैनेजमेंट) का बाजार भी गर्म हो गया है। बहुत सी सरकारी और ग़ैर-सरकारी तथा देशी और विदेशी संस्थाएं बाढ़ को आपदा मान कर उसके प्रबंधन की ट्रेनिंग देने में लगी हैं। ऐसी संस्थाएं एक ग़लती तो यह करती हैं कि वह बाढ़ को समग्रता में नहीं देखतीं। बाढ़ के पानी से ज़मीन की उर्वरा शक्ति बढ़ती है, भूगर्भ जल की सतह सुरक्षित रहती है तथा नदियां अपने डेल्टा निर्माण के कर्तव्य का निर्वहन इसी तरीक़े से करती हैं। इस इलाके की पूरी जीवन शैली, सभ्यता और संस्कृति इन्हीं नदियों, उनकी बाढ़ और पानी की बहुतायत के इर्द-गिर्द घूमती है। बाढ़ वाले क्षेत्रों में जनसंख्या का घनत्व 1000 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर के आस-पास बिना बात नहीं है। नदियों के इस जीवनदायी स्वरूप को भुला कर सरकार जहां एक ओर बाढ़ का नियंत्रण करने की योजनाएं बना कर और उनको क्रियान्वित कर के नदियों को वह ताकत देती हैं कि उनकी मारक शक्ति के आगे आदमी बेबस हो जाये तो वहीं सरकार समेत दूसरी संस्थाएं बाढ़ के इस मानव निर्मित विकृत स्वरूप को आपदा बता कर उसके प्रबन्धन में लग जाती हैं। बाढ़ का विकृत और विध्वंसक स्वरूप बाढ़ नियंत्रण की ग़लत नीतियों के

अनुसरण करने के कारण हुआ है, इसका संज्ञान कोई नहीं लेता। इन दोनों तरह की संस्थाओं, यानी बाढ़ नियंत्रण करने वाली और आपदा प्रबंधन करने वाली संस्थाओं, के बीच न तो कोई वार्तालाप है न कोई सामन्जस्य। नतीजा यह होता है कि बाढ़ नियंत्रण अपनी रफ़्तार से चलता है और आपदा प्रबंधन अपने ढर्रे पर।

आज हालत यह है कि बाढ़ नियंत्रण की ग़लत नीतियों के कारण चिर-प्रतीक्षित बाढ़ अब आपदा या विपत्ति में बदल गई तो बिना किसी बहस मुबाहसे के आपदा प्रबन्धन करने वाले भी पैदा हो गये। अब अगर कोई तटबन्ध टूट कर आस-पास के इलाकों को तबाह कर दे तब सरकार, समाज और अधिकांश एन.जी.ओ. इस पूरी घटना और उसके कारणों की अनदेखी कर के आपदा प्रबन्धन में जुट जाते है। यहां तक तो ठीक है क्योंकि विपत्तियों का सामना करते समय एकाग्रता भंग नहीं होनी चाहिये मगर विपत्ति का समाधान हो जाने और सामान्य जन-जीवन बहाल हो जाने के बाद भी जब कारणों और उनके निराकरण पर चर्चा नहीं होती और फिर अगली बरसात में उसी स्थान पर बिना कोई सबक सीखे फिर आपदा प्रबन्धन की तैयारी की जाती है तब इन संस्थाओं की नीयत पर शक़ होता है। इस तरह की आपदा और उसके प्रबन्धन में इन संस्थाओं के निहित स्वार्थ हैं, ऐसा लगता है। बाढ़ के कारणों का संज्ञान न लेकर यह संस्थाएं बाढ़ नियंत्रण करने वालों को छुट्टा छोड़ देती हैं और थोड़ा बहुत संसाधन बिखेर कर प्रशासन का भी मन मोह लेती हैं। इसे कहते है 'चोर से कहना चोरी करियो और साह से कहना जागते रहियो।' यानी एक ओर ग़लत नीतियां लागू कर के लोगों को डुबाया जाय और दूसरी ओर आपदा प्रबन्धन के नाम पर लोगों को दिलासा दी जाये या थोड़ी-बहुत मरहम-पट्टी कर के समस्या से किनारा कर लिया जाय। यह अगर दस्तूर बन गया तो इस देश से बाढ़ कभी खत्म नहीं होगी।

जहां तक सरकारी संस्थाओं का सवाल है, उनका तो बजट का प्रावधान अगर ख़र्च हो जाता है तो उनका गंगा-स्नान हो गया फिर वह पैसा चाहे जहां और चाहे जैसे ख़र्च हुआ हो। यह बात आपदा प्रबन्धन द्वारा राहत कार्यों में बरती गई अनियमितता और तटबन्धों की मरम्मत के नाम पर बालू की भीत खड़ा करने वाले जल-संसाधन विभाग, दोनों पर समान रूप से लागू होती है। बिहार का 2004 का राहत घोटाला इसकी एक छोटी सी मिसाल है। यह खेल कब से चल रहा होगा, कह पाना मुश्किल है मगर छींटे तभी पड़ते है जब कीचड़ उछलना शुरू होता है। 2004 में यही हुआ। कोसी पर 1963 में बराज के निर्माण के बाद पूर्वी कोसी मुख्य नहर और पश्चिमी कोसी नहर नाम की दो नहरें निकाली गईं। यह नहरें कितनी कामयाब हुई, यह हमने परखने की कोशिश की है।

इस पुस्तक में हमने इन सारे पहलुओं पर बहस के लिए सामग्री एकत्र करने का प्रयास किया है। पानी सम्बंधी विषयों पर गोपनीयता का शिकंजा कसा रहता है और व्यवस्था अपनी ताकत भर सारी सूचनाओं के अधिकार के बावजूद किसी भी असुविधाजनक आंकड़े या रिपोर्ट को जनता तक नहीं पहुँचने देती। ऐसे में तथ्यपरक सूत्रों का जुगाड़ करना बड़ा दुश्वार होता है। सूचनाओं के अभाव में हमने लोकतांत्रिक संस्थाओं जैसे लोकसभा, विधान सभा और विधान परिषद में हुई बहस को यथासंभव उद्धृत किया है क्योंकि यही वह संस्थाएं हैं जहां जन-प्रतिनिधि बोलते हैं, सरकार जवाब देती है और सदन की कार्यवाही की रिपोर्ट आम आदमी के लिए उपलब्ध रहती है। हमने इस सुविधा का भरपूर उपयोग किया है और इसके अलावा हमारे सामने दूसरा कोई रास्ता भी नहीं था। इतना कर लेने के बाद हमने सम्बद्ध अधिकारियों से बात-चीत की है, पुस्तकालयों में इस बात चीत में आये विचारों की पुष्टि करने की कोशिश की है और क्षेत्र में जाकर किसानों और बाढ़ पीड़ितों से बात की है। बहुत से अवकाश प्राप्त इंजीनियरों ने कई गुत्थियों को सुलझाने में बड़ी अहम भूमिका निभाई है। यह हम सब के लिए बड़े सौभाग्य की बात है कि जो कहानी मैं लिख कर सबको बताना चाहता हूँ उस कहानी के बहुत से पात्र हमारे बीच अभी भी मौजूद हैं। थोड़ी देर और होती तो यह कहानी अधूरी रह जाती बल्कि शायद अविश्वसनीय भी हो जाती।

उम्मीद की जाती है कि यह पुस्तक कोसी के बारे में उन बहुत से सवालों का जवाब देगी जो कि इस विषय में रुचि रखने वाले किसी भी व्यक्ति के मन में उपजते हैं। अगर इस सामग्री से बाढ़ पीड़ितों की तर्क क्षमता को थोड़ी भी धार मिलती है और अंधेरी रात में घर में चोर घुसने पर उसे सचेत करने के लिए खांसने भर की हिम्मत हो जाती है तो मैं अपना प्रयास सफल मानूंगा।

(दिनेश कुमार मिश्र)

जमशेदपुर

25 सितम्बर 2006

# आभार

इस पुस्तक की तैयारी में मुझे बहुत से मित्रों और शुभचिंतकों का सहयोग मिला है। बिहार की बाढ़ समस्या के बारे में मेरी पहली बातचीत रघुपति के सौजन्य से 25 सितम्बर 1985 को बिहार के भूतपूर्व चीफ़ इंजीनियर अखौरी परमेश्वर प्रसाद से हुई थी। इस बातचीत का कैसेट मेरे पास अभी भी मौजूद है। उस समय मैंने कभी सोचा भी नहीं था कि मैं इस विषय पर कोई पुस्तक लिखूंगा। इसी क्रम में सर्वश्री अवध कुमार, दिनेश प्रसाद वर्मा, सी.के. पाण्डेय, वाई.एन. सिंह, बसावन सिंह और अमल दासगुप्ता आदि से मैंने बहुत कुछ सीखा। यह सभी महानुभाव बिहार के जल संसाधन विभाग में महत्वपूर्ण पदों को सुशोभित कर चुके हैं। हाल के वर्षों में प्रो. सी.पी. सिन्हा, कुबेर नाथ लाल, पी.एन. त्रिवेदी, राजेन्द्र उपाध्याय, हेमन्त लाल चावड़ा और एम.एम. तिवारी आदि से वार्ता-सुख मिला। मैं इन सभी के प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करता हूं।

आई.आई.टी. (खड़गपुर), सिंचाई विभाग-उत्तर प्रदेश (लखनऊ), राष्ट्रीय पुस्तकालय और एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल (कोलकाता), बिहार विधान सभा, बिहार विधान परिषद्, सिन्हा लाइब्रेरी, बिहार रिसर्च सोसाइटी (पटना) और वैशाली विकास परिषद् (वैशाली), आदि में दस्तावेज़ों की खोज में मुझे सहायता मिली है। मैं इन सभी संस्थाओं के अधिकारियों को धन्यवाद देता हूं। मा. सदानन्द सिंह ने मुझे बिहार विधान सभा और मा. प्रो. जाबिर हुसैन ने बिहार विधान परिषद् पुस्तकालय में पढ़ने की इज़ाज़त न दी होती तो इस पुस्तक का यह रूप कभी नहीं होता।

क्षेत्र भ्रमण में कामेश्वर कामति और विश्वनाथ मिश्र जाड़े-बरसात की परवाह न करते हुये मोटर साइकिल पर मुझे भींगते-भांगते शान्त भाव से घुमाते रहे। मधुबनी के प्रखण्डों के साथ कोसी और कमला के तटबन्धों के नक्शों को चुनाव कार्यालय से निकाल लाना कामेश्वर जी का पराक्रम था। ऐसा ही सहयोग बिनोद कुमार (बलभद्रपुर), रमेश कुमार और तपेश्वर भाई (जगतपुर) से मिला। बगहा (प. चम्पारण) के अरुण कुमार सिंह ने मेरे लिए एक माह के लिए एक गाड़ी की व्यवस्था कर दी थी और बिनोद कुमार (मधुबनी) ने लम्बे समय के लिए कई मोटर साइकिलों की व्यवस्था मेरे लिए की और अपने साथियों को मेरे साथ लगाया। यहां शशि भूषण और रामाशिष रमण मुझे मोटर साइकिल पर पीछे बिठा कर घुमाते रहे। रामेश्वर (पुरे) के यहां रह कर मैं पश्चिमी कोसी नहर के निचले हिस्सों को देख-समझ सका। सारी थकान और खीझ से मुक्ति देने का काम सुखेत के सूर्य नारायण ठाकुर करते थे। ऐसा ही सहयोग कोसी के पूर्वी तटबंध पर राजेन्द्र झा (महिषी), ब्रह्मदेव चौधरी (कठघरा पुनर्वास) और सत्य नारायण प्रसाद (सिमराही) से मिला। प्रेम कुमार वर्मा (खगड़िया) ने घाट व्यवस्था और कील गड़ाई के बारे में जानकारी उपलब्ध करवाई। महिषी के केदार मिश्र और कोठिया के जय जयराम के साथ मुझे कई बार कोसी तटबंधों के बीच घूमने का मौका मिला। अभय कान्त मिश्र से मुझे कोसी के सांस्कृतिक पक्ष के बारे में बहुत जानकारी मिली। मैं इन सभी के प्रति अपना आभार व्यक्त करता हूं। इन मित्रों के सहयोग के बिना यह काम कभी समाप्त नहीं होता।

मनीष कुमार मिश्र ने विधान सभा और लोकसभा की कार्यवाही रपट से सटीक चीजें खोजने में मेरी मदद की। कविन्द्र कुमार पाण्डेय ने विपरीत परिस्थितियों में कोसी के तटबंधों के अलाइनमेंट का सत्यापन और बहुत से गांवों के सर्वेक्षण के लिए दिन-रात एक किया, लम्बे समय तक प्रूफ़ रीडिंग में मेरी मदद की और पुस्तक को इस रूप में लाने में मदद की। मैं जब भी पटना में रहा प्रमोद कुमार ने मेरी अच्छी देखभाल की। पुस्तक का अंतिम प्रूफ़ भी उन्होंने ही पढ़ा।

सर्वश्री शिवानन्द भाई, रामचन्द्र खान, आचार्य नाज़िम रिज़वी, महावीर प्रसाद महतो और नागेन्द्र सिंह (अब स्व.) से मिले सहयोग के बिना मेरे तर्क का आधार खिसक जाता। नागेन्द्र जी ने बहुत से पुराने काग़ज़ात अपने संग्रह से मेरे हवाले कर दिये। उनके इस सहयोग के बिना पुस्तक का स्वरूप कभी प्रमाणित नहीं हो पाता। मैं इन सभी के प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ।

भारत-नेपाल के सीमावर्ती क्षेत्रों को देखने-समझने में सुशील कुमार झा (कमलपुर), पंचम भाई (कुनौली), ऐडवोकेट सूर्य नारायण कामति, (निर्मली) और ऐडवोकेट देव नारायण यादव, (रमपुरा-सप्तरी, नेपाल) ने बहुत मदद की। साथ ही राम जी 'सन्मुख'(रानीपट्टी), सन्तोष कुमार (मोतीपुर), श्री भगवान पाठक (कर्णपुर), कृष्ण कुमार कश्यप (बरहेता), दिगम्बर मंडल और सुनील कुमार मंडल (खैरी) के सहयोग के लिए मैं उन्हें धन्यवाद देता हूं। विजय कुमार ने मेरे साथ कुछ समय कलकता के राष्ट्रीय पुस्तकालय तथा एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल में बिताया, मैं उनके प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करता हूं। सुपौल के ऐडवोकेट देव कुमार सिंह ने अपने संघर्ष सम्बंधी बहुत से कागज़ात मुझे मुक्त-हस्त से उपलब्ध करवाये, मैं उनका आभार प्रदर्शन करता हूं।

दक्षिण गुजरात विश्वविद्यालय, सूरत के मैनेजमेंट फैकल्टी के डीन प्रो. सतेन्द्र कुमार से समय-समय पर मिली टिप्पणियों से प्रस्तुति का क्रम बनाये रखने में बड़ी मदद मिली है। मैं उन्हें धन्यवाद देता हूं। डॉ. अजय कुमार (पटना) के सौजन्य से कृषि संबंधी बहुत सी सूचनाएं मुझे मिलीं, मैं उन्हें भी धन्यवाद देता हूं। राजेश झा (जमशेदपुर) ने पश्चिमी कोसी नहर के बारे में बहुत कुछ सामग्री मेरे लिए एकत्र की। प्रभाष दुबे और मणिमय सिन्हा ने कम्प्यूटर पर बहुत सा काम मेरे लिए किया। प्रदीप कुमार झा, जितेन्द्र और सतेन्द्र ने पटना में स्थानीय स्तर पर सूचनाएं एकत्र करने में मेरी बहुत मदद की। मैं इन सभी के प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करता हूं। कुमार कलानन्द मणि (गोवा), राकेश कुमार झा (दिल्ली)और ग्रेसी मिड्डी कुट्टी की सदाशयता के लिए मैं उनका आभारी हूं।

इसके साथ ही मैं उन सभी लोगों के प्रति कृतज्ञ हूं जिन्होंने अपना अमूल्य समय मुझे दिया और मेरा ज्ञानवर्धन किया। इनमें से बहुत लोगों को मैंने उद्धृत भी किया है और यथासंभव कोशिश की है उनके विचारों को उन्हीं के अनुरूप रख सकूं। पुस्तक की प्रस्तुति में ज़की अहमद, प्रदीप कुमार, डॉ. कंजीव लोचन, डॉ. रवि चोपड़ा, संजय कुमार, संजीव, गुड्डू कुमार, अशोक कुमार, प्रभात कुमार मिश्र, अमित सिन्हा तथा गोविन्द रावत के प्रति मैं अपना आभार व्यक्त करता हूं।

सेन्टर फॉर वर्ल्ड सॉलिडैरिटी, हैदराबाद के एम.वी. शास्त्री, के. रामाराव, डॉ. रुक्मिणी राव और कलामणि की रुचि, उत्साहवर्धन और सहयोग के बिना यह कार्य संभव ही नहीं हो सकता था। मैं उनकी इस सदाशयता के प्रति कृतज्ञ हूं। अंत में मैं अपने अग्रज डॉ. कैलाश कुमार मिश्र और भाभी श्रीमती जानकी मिश्र के प्रति अपना आभार व्यक्त करता हूं कि उन्होंने हमेशा मेरा उत्साह बढ़ाया।

प्रपितामह पं. रामानन्द मिश्र की पुण्य स्मृति को सादर समर्पित

# विषय सूची


| अध्याय | | पृ॰ सं॰ |
|---|---|---|
| 1. | कोसी परिचय | 1 |
| 2. | बाढ़ रोकने की कहानी | 11 |
| 3. | तटबन्धों का रेखांकन-तकनीक नहीं, जनमत संग्रह | 41 |
| 4. | यह दरारें आखिरी नहीं हैं | 55 |
| 5. | पूर्वी कोसी मुख्य नहर | 83 |
| 6. | पश्चिमी कोसी नहर | 98 |
| 7. | जन-सहयोग और कोसी परियोजना | 111 |
| 8. | दुइ पाटन के बीच में... | 124 |
| 9. | पानी से लिखी कहानी | 150 |
| 10 | बीच का रास्ता | 169 |


## नक्शों की सूची


| | | |
|---|---|---|
| चित्र 1.1 | कोसी नदी का सूचक मानचित्र | 3 |
| चित्र 1.2 | उत्तर बिहार तथा उसकी नदियों का सूचक मानचित्र | 3 |
| चित्र 1.3 | कोसी की विभिन्न धाराएं | 5 |
| चित्र 2.1 | कोसी परियोजना का प्रस्तावित मानचित्र (1953) | 27 |
| चित्र 3.1 | कोसी नदी के पूर्वीय बांध का मानचित्र | 42-43 |
| चित्र 3.2 | पश्चिमीय बांध और कोशी नदी की धारा का मानचित्र | 42-43 |
| चित्र 3.3 | कोसी का विवादित पश्चिमी तटबन्ध | 42 |
| चित्र 3.4 | जनता द्वारा प्रस्तावित पश्चिमी कोसी तटबन्ध | 43 |
| चित्र 3.5 | कोसी के यथानिर्मित तटबन्ध | 44 |
| चित्र 4.1 | कोसी के यथानिर्मित तटबन्ध | 55 |
| चित्र 4.2 | भटनियाँ एप्रोच बांध का सूचक रेखा चित्र | 64 |
| चित्र 4.3 | हेमपुर के पास कोसी के पूर्वी तटबन्ध में पड़ी दरार के कारण पानी का फैलाव | 69 |
| चित्र 5.1 | पूर्वी कोसी मुख्य नहर का वर्तमान स्वरूप | 84 |
| चित्र 5.2 | योजना आयोग (1977-78) के मूल्यांकन में निर्धारित कोसी के विभिन्न क्षेत्र | 93 |
| चित्र 6.1 | पश्चिमी कोसी नहर का प्रस्तावित स्वरूप | 103 |


## तालिकाओं की सूची


| | | |
|---|---|---|
| तालिका 4.1 | कोसी तटबन्ध टूटने से (1984) प्रभावित क्षेत्रों का विवरण | 72 |
| तालिका 5.1 | कोसी परियोजना-पूर्वी कोसी मुख्य नहर द्वारा सिंचित क्षेत्र | 88 |
| तालिका 5.2 | पूर्वी कोसी नहर पर विगत कुछ वर्षों में हुआ ख़र्च | 96 |
| तालिका 6.1 | पश्चिमी कोसी नहर से वास्तविक सिंचाई | 106 |
| तालिका 6.2 | पिछले कुछ वर्षों में पश्चिमी कोसी नहर परियोजना पर किया गया ख़र्च | 109 |
| तालिका 6.3 | पश्चिमी कोसी नहर पर वर्ष 1990-91 से 1994-95 से तक किया गया ख़र्च | 109 |
| तालिका 8.1 | कोसी तटबंधों के बीच फँसे गाँवों की प्रखण्ड वार संक्षिप्त जानकारी | 131 |
| तालिका 8.2 | उन स्थलों का विवरण जहाँ कोसी तटबन्ध पीड़ितों को पुनर्वास दिया गया | 142-43 |
| अनुलग्नक 1 | कोसी तटबंधों के बीच और उनके द्वारा विभाजित गाँवों की जिला / प्रखंडवार सूची | 147-48 |
| तालिका 9.1 | सहरसा जिले के 4 सबसे ज़्यादा बाढ़ प्रभावित प्रखंडों में स्वाथ्य उपकेन्द्र तथाअतरिक्त प्राथमिक स्वास्थ्य उपकेन्द्रों की सूची | 158 |
| तालिका 9.2 | कोसी तटबन्धों के बीचों बीच सर्वेक्षण किये गये गाँवों की बुनियादी जानकारी | 160 |
| तालिका 9.3 | तटबंध निर्माण के तुरंत बाद तथा उसके 12 वर्ष बाद में कोसी नदी के तल की स्थिति | 167 |